International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

संस्कृत साहित्य में भाग्य एवं कर्म का समन्वयात्मक विश्लेषण

डॉ. वन्दना मिश्रा

असिस्टेन्ट प्रो. संस्कृत विभाग, सन्त तुलसी दास पी0जी0 कालेज कादीपुर,, सुलतानपुर

Abstract:
भाग्य एवं पुरूषार्थ दोनों का ही अपना–अपना महत्व है, लेकिन इतिहास पर दृष्टि डाली जाए तो सामने आएगा कि जीवन में पुरूषार्थ की भूमिका भाग्य से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। भाग्य की कुंजी सदैव हमारे कर्म के हाथ में होती है, अर्थात कर्म करेंगे तो ही भाग्योदय होगा। जब कि पुरूषार्थ इस विषय में पूर्णतः स्वतंत्र है। माना कि पुरूषार्थ सर्वोपरी है किन्तु इतना कहने मात्र से भाग्य की महता तो कम नहीं हो जाती । इन्सान द्वारा किए गए कर्मों से ही उसके भाग्य का निर्माण होता है । लेकिन कौन सा कर्म, कैसा कर्म और किस दिशा में कर्म करने से मनुष्य अपने भाग्य का सही निर्माण कर सकता है–ये जानने का जो माध्यम है, उसी का नाम ज्योतिष एवं हस्तरेखा है। संसार में कुछ लोग पुरुषार्थ को ही विशेष महत्त्व देते है उनके लिए भाग्य से भी अधिक महत्त्वपूर्ण पुरुषार्थ है। वे कहते हैं अगर भाग्य से आपको कुछ भी नहीं मिलता तो आप पुरुषार्थ के द्वारा उसको अवश्य प्राप्त कर सकते हैं। अतः अनेक विचारकों के अनुसार परिश्रम पर भरोसा करने वाले उद्यमियों को ही धन–सम्पत्ति, सफलता प्राप्त होती है। भाग्य ही सब कुछ है वह तो कामचोरों का ही कथन है।

Keyword: मनुष्य को भाग्य से अधिक अपने भुजबल पर भरोसा हो।

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः। नास्त्युद्यमसमो बन्धुः कृत्वा यं नावसीदति ।।
भारत भूमि को देव–भू और संस्कृत भाषा को दैवी भाषा कहा गया है। सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में आध्यात्मिकता की अन्तर्धारा विद्यमान है, जो मुख्यतः पुरुषार्थ नामक चतुर्भुजीय पुरुषार्थ–चतुष्टय अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति पर आधारित है।

कर्मणामी भान्ति देवाः परत्र कर्मणैवेह प्लवते मातरिश्वा।
अहोरात्रे विदधत् कर्मणैव अतन्द्रितो नित्यमुदेति सूर्यः।।

अतः शायद ही कोई ऐसा कार्य हो, जिसमें उत्कृष्ट प्रभावी उक्तियों का प्रयोग न हुआ हो, किन्तु प्राचीन काल से ही कवियों और विद्वानों द्वारा भावी पीढ़ियों में नैतिक मूल्यों का संचार करने के उद्देश्य से ही उत्तम उक्तियों के सुन्दर संग्रह रचने के लिए विशिष्ट रचनाएँ लिखी जाती रही हैं। इस दिशा में कुछ प्राचीन रचनाएँ हैं – राज–नीति समुच्चय, चाणक्य–नीति–दर्पण, नीतिसार, नीति–प्रदीप पंचतंत्र, हितोपदेश, महाकाव्य रामायण और महाभारत, भर्तृहरि की नीतिशतकम, आदि। मनुष्य एक कर्म प्रिय प्राणी है। कर्म को वह अपना श्रेष्ठ साधन समझता है। क्योंकि कर्म के द्वारा उसको सुख, दुःख और मोक्ष या सद्गति आदि से भी प्राप्त होते हैं। मार्कण्डेय शारदेय, ज्योतिषविद् में कहा गया है – समुद्र–मथने लेभे हरिः, लक्ष्मीं हरो विषम्। भाग्यं फलति सर्वत्र ,न च विद्या न पौरुषम्।। अर्थात् समुद्र–मंथन में विष्णु को लक्ष्मी मिलीं और शिव को विष. मायने यह कि भाग्य का ही फल सभी जगह मिलता है, विद्या और उद्योग का नहीं. यह कथन अपने उदाहरण से भले ही भाग्यवादी सोच को बल देता हो, पर ज्ञान और उद्यम का सदा महत्व रहा है। ऐसा नहीं होता तो शिक्षा केंद्रों की जरूरत नहीं होती। लोग रात–दिन मेहनत नहीं करते। लक्ष्मी, विष्णु की ही थीं। शिव ने तो स्वयं ही जगत् के कल्याण के लिए विषपान किया था। भाग्य की देन तब कहा जाता, जब स्वतः उन्हें विष उपलब्ध होता।

वस्तुतः भाग्य कर्म का ही फल होता है। कभी किसी गरीब को अचानक राह चलते रत्नों की गठरी मिल गयी या किसी का बहुमूल्य सामान खो गया, तो लोग भाग्यफल कह सकते हैं, परंतु भाग्य भी कर्म का ही अंश है। संसार के सभी चराचरों में मानव निस्संदेह सर्वश्रेष्ठ प्राणी है क्योंकि केवल इसी में मानसिक बल है। केवल मनुष्य ही चिंतन–क्षमता रखता है तथा केवल उसी में संकल्प करके किसी भी असंभव प्रतीत होने वाले कार्य को संभव बनाने में सामर्थ्य विद्यमान है। पुरुषार्थ के बल पर वह क्या कुछ नहीं कर सकता। उसने अपने पुरुषार्थ के बल पर ही आज मृत्यु लोक का नंदन कानन बना दिया है जिसे देखकर स्वयं विधाता भी चंकित हुए बिना नहीं रह पाएगा। तुलसीदास जी ने ठीक ही कहा है–'कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस करहि सो तस फल चाखा' अर्थात् संसार कर्म प्रधान है। यहाँ अपने कर्मों के अनुसार ही फल प्राप्त होता है। कर्म के कारण ही आज का मनुष्य पाषाण युग से निकलकर अंतरिक्ष युग में आ पहुंचा है। कर्म ही पुरुषार्थ है। इसी पुरुषार्थ के बल पर मनुष्य ने पर्वतों को काटकर सड़कें बना दीं, नदियों का रुख मोड़ दिया, समुद्र की गहराइयों से खनिज निकाल लिए, पृथ्वी के गर्भ में छिपी अनंत खनिज–संपदा को प्राप्त कर लिया, आकाश में पक्षियों की भाँति उड़ने में समर्थ हो गया। यही नहीं दूसरे ग्रहों पर भी उसके चरण पड़ चुके हैं। आज के संसार की समस्त वैभव, सुख, समृद्धि आदि का कारण मनुष्य का पुरुषार्थ ही है। इन्हीं सब कारणों से मनीषियों का मानना है कि केवल कार्यशील मनुष्य ही समय पर शासन करते हैं। समय भी उन्हीं के रथ–अश्वों को हाँकता है, जो कर्मण्य हैं। कुछ लोग मानव जीवन में उसकी उन्नति और उपलब्धियों के लिए भाग्य को उत्तरदायी मानते

हैं। भाग्यवादियों के तर्क हैं कि जो कुछ मनुष्य के भाग्य में लिखा है, वह अवश्य होकर रहता है। वे कहते हैं–'कर्म गति टारे नाहीं टरे।' भाग्य के कारण ही सत्यवादी एवं महाप्रतापी राजा हरिश्चंद्र को एक नीच के हाथ बिकना पड़ा और श्मशान में नीच काम करना पड़ा। भाग्य के कारण ही श्री राम जैसों को जंगलों की खाक छाननी पड़ी, भाग्य के कारण ही पांडवों को वनवास में अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा और दुर्योधन जैसे अहंकारी ने काफ़ी समय तक सुख भोगा। यदि भाग्य बली न होता, तो भीम जैसे महायोद्धा को विराट के यहाँ रसोइए का काम न करना पड़ता। कुछ लोग भाग्यवादी होते हैं, तो कुछ पुरुषार्थ के समर्थक। दोनों के अपने–अपने तर्क हैं। पुरुषार्थ पर विश्वास करने वाले कहते हैं कि यदि अब्राहम लिंकन भाग्य के भरोसे बैठा रहता, तो अपने पिता के साथ जीवन भर लकड़ियाँ काटने का काम करता रहता, स्टालिन जीवन भर अपना पैतृक व्यवसाय जूते बनाने का कार्य करता, नेपोलियन कभी विश्व विजेता न बन पाता। भाग्यवादी भी इसी प्रकार के अनेक उदाहरण देकर अपने पक्ष का समर्थन करते हैं। वे कहते हैं कि राम के विवाह का शुभमुहूर्त वशिष्ठ जैसे महाज्ञानी ने निकाला था, पर विवाह के तुरंत बाद वन गमन, फिर दशरथ की मृत्यु और बाद में सीता का हरण भाग्य के कारण ही हुए। इसीलिए भाग्यवादियों का कहना है कि 'अदृश्य की लिपि ही भाग्य है' दोनों पक्षों का अवलोकन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल भाग्य के भरोसे बैठे रहने से कुछ प्राप्त नहीं होता। वास्तव में कर्म और भाग्य एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। केवल भाग्य के भरोसे बैठने वाले आलसी और निकम्मे होते हैं। पुरुषार्थ किए बिना भाग्य भी किसी को कुछ नहीं दे सकता।

भारतीय संस्कृति, भारतीय परंपरा एवं भारतीय शास्त्रों में कर्म का विशद महत्त्व वर्णन मिलता है। अब प्रश्न उठता है क्या मनुष्य कर्म किये बिना रह सकता ? इसका उत्तर उपनिषदों की सारभूत भगवद्गीता में इस प्रकार दिया गया है–

न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।।

अर्थात् कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षणभर भी कुछ न कुछ कर्म किये बिना नहीं रह सकता, क्योंकि स्वाभाविक प्रकृतिजनित गुण उसे कर्म करने के लिए प्रवृत्त करते ही हैं। यह स्पष्ट है, यदि वह इच्छापूर्वक कर्म नहीं करेगा तो विषय वासना उससे बुरे कर्म कराएगी। यह बात भी लोक प्रसिद्ध है–''खाली मन शैतान का घर''। कर्म के बिना कोई भी नहीं रह सकता। ऋग्वेद (के एक मन्त्र) में सुभग शब्द का प्रयोग हुआ है–

सेदग्ने अस्तु सुभगः सुदानुर्यस्त्वा नित्येन हविषा य उक्थैः।
प्रिप्रीषति स्वआयुषि दुरोणे विश्वेदस्मै सुदिना सासादिष्टः।।

अर्थात् जो व्यक्ति नित्य हवि प्रदान से और स्तुति वचनों से अपने दुर्लभ मानव जीवन में तुझे सन्तुष्ट करता है, हे अग्ने! केवल वही व्यक्ति सौभाग्यशाली और सच्चा दानी कहलाने योग्य है। इसका प्रत्येक दिन सुदिन होता है, और इसकी प्रत्येक इच्छा यश का रूप धारण करके सफल होती है। कर्म ही प्रबल या प्रधान है, न कि भाग्य'–इस उक्ति को उक्ति न कहकर सूक्ति कहना चाहिए। युगों–युगों से यह स्थापित सत्य स्वीकार होकर बार–बार प्रमाणित हुआ है कि मनुष्य भाग्य के बल पर नहीं अपितु अपने भुजबल अर्थात् कर्म पर चलकर ही सभी प्रकार की सिद्धियों या उपलब्धियों को पाता है।

कर्मणामी भान्ति देवाः परत्र कर्मणैवेह प्लवते मातरिश्वा।
अहोरात्रे विदधत् कर्मणैव अतन्द्रितो नित्यमुदेति सूर्यः।।

शास्त्रों में भाग्य को अदृष्ट, दैव, अपूर्व आदि नामों से जाना जाता है। अमरकोश ने भाग्य शब्द का पर्यायवाची (शब्द) निम्न प्रकार दिये हैं :– ''दैवं भागधेयं भाग्यं स्त्री नियतिर्विधिः।

भाग्य शब्द का अर्थ वामन शिवराम आप्टे ने भी Fate, Destiny, Luck, Fortune आदि अर्थ किये हैं। इस प्रकार पुरुषार्थ शब्द का अर्थ आप्टे ने (1) Objects of human life (अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष), (2) Human effort, exertion (अर्थात् पुरुषकार) अर्थ किये हैं। अतः पुरुषार्थ शब्द का अर्थ हम प्रयत्न, उद्यम, परिश्रम आदि कर सकते हैं। भाग्य और पुरुषार्थ का परस्पर सम्बन्ध है। केवल भाग्य के ऊपर निर्भर रहने से कार्य नहीं होता और केवल पुरुषार्थ के ऊपर विश्वास करने या निर्भर करने से भी अगर भाग्य साथ नहीं देता तो कार्य सफल नहीं हो पाता। भाग्य और पुरुषार्थ दो ऐसे शब्द हैं, जो व्यक्ति की जीवन को बदल देते हैं। पुरुषार्थ अर्थात परिश्रम या मेहनत। जो व्यक्ति अपने जीवन में परिश्रम करता है वह अपने जीवन की हर ऊंचाइयों को प्राप्त करता है। जो भाग्य के सहारे बैठा रहता है और कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता। भाग्य कोई पूर्व निर्धारित नहीं होता, यह हमारे कर्म के आधार पर बनता है। हम जिस तरह का कर्म करेंगे वैसा ही फल हमें मिलेगा। हमारे नीति शास्त्रों में भी लिखा है कि परिश्रम करने से ही सब कार्य सफल होते हैं। इस धरा पर इंसान ने जितना भी विकास किया है, अगर वह परिश्रम न करता तो क्या यह सब संभव होता, क्या वह भाग्य के भरोसे बैठे रहते तो यह सब कार्य हो पाता, अर्थात नहीं।

अचोद्यमानानि यथा, पुष्पाणि फलानि च।
स्वं कालं नातिवर्तन्ते, तथा कर्म पुरा कृतम्।
कर्मणा वर्धते धर्मो यथा धर्मस्तथैव सः।
काकतालीयवत्प्राप्तं दृष्ट्वापि निधिमग्रतः।
न स्वयं दैवमादत्ते पुरुषार्थमपेक्षते।।

भाग्य के सहारे केवल वही व्यक्ति बैठता है, जो अपना कर्म ठीक ढंग से नहीं करता है। गीता में भगवान श्री कृष्ण का है कि "हमें अपना कर्म करने में अधिकार रखना चाहिए"। अपने कर्मों के द्वारा ही व्यक्ति महान बनता है। आज महात्मा गांधी को पूरा विश्व नमन करता है क्योंकि वह अपना हर कार्य स्वयं करना पसंद करते थे। हमें भाग्य के बजाय कर्म पर विश्वास रखना चाहिए।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतु र्भूर्मा ते संगोस्त्वकर्मणि।।

सनातन धर्म या वैदिक धर्म में हम पुनर्जन्म के ऊपर विश्वास करते हैं। अतः प्रारब्ध के ऊपर भी हम विश्वास रखते हैं। पूर्व जन्म में किया गया कर्म हमारा भाग्य के रूप में फल देता है या भाग्य के रूप में जाना जाता है। अतः पूर्व जन्म का कर्म भाग्य (कहलाता) है और इस जन्म में किया जा रहा कर्म पुरुषार्थ कहलाता है। यह दोनों जब साथ देंगे तब मनुष्य कार्य संपादन कर पाता है या उसको कर्म का फल प्राप्त होता है अन्यथा नही ं। साधारणतया भाग्य और पुरुषार्थ को हम इस प्रकार भी समझ सकते हैं। जैसे– पुरुषार्थ करने पर भी जब निष्फलता दिखाई देती है और उसका कोई कारण ढूं सकते हैं। भारतीय शास्त्रों में पुरुषार्थ का महत्त्व बताया गया है। पुरुषार्थ करने पर ही कार्य सिद्ध होता है। कुछ लोग पुरुषार्थ को विशेष महत्त्व देकर कार्य सिद्धि के लिए विशेष परिश्रम या उद्योग करते हैं। यदि कठोर परिश्रम के पश्चात् उनकी सुफल मिलता है तो वे पुरुषार्थ को श्रेष्ठ समझते हैं। परन्तु जो लोग कम परिश्रम करके कार्य में सफलता पा जाते हैं तो वे भाग्य या दैव को श्रेष्ठ मानते हैं। जयशंकर प्रसाद जी ने लिखा है कि–दुख की पिछली रजनी बीत, विकसता सुख का नवल प्रभात।। गोस्वामी तुलसीदास जी ने बड़े अच्छा तरीके से दोनों चीजों को एक साथ एक ग्रंथ में परिभाषित कर दिया, एक जगह लिख दिया की 'होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तर्क बढ़ावै साखा॥ और दूसरी जगह लिख दिया कि 'कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस करहि सो तस फल चाखा ।। संस्कृत ग्रन्थों में इसके सशक्त उदाहरण है।

पुरुषार्थ को विशेष महत्त्व देकर भट्टनारायण ने वेणीसंहार नाटक में कर्ण के मुख से कहलवाया है– दैवायत्तं कुले जन्म मदायत्तं तु पौरुषम्।। अर्थात् कर्ण के अनुसार किसी कुल विशेष में जन्म लेना दैव या पूर्व जन्मगत कर्म फल के अधीन है और तदनन्तर पुरुषार्थ करना अपने वश की बात है। संस्कृत हितोपदेशकार ने इन दोनों का समन्वय दर्शाते हुए ही कहा है– यथाः ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवति। पुनश्च याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार–पुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति। अर्थात् जैसे एक ओर के पहिए से यान नहीं चलता, ठीक वैसे ही पुरुषार्थ के बिना दैव फलदायक नहीं होता। अतः भाग्य और पुरुषार्थ के समन्वय की भावना स्पष्ट है। नीतिशतक में भतृहरि ने भाग्य को विशेष महत्त्व देकर कहा है– ''मनुष्य का न तो सुन्दर रूप फल देता है, न कुलीनता, न सत् स्वभाव, न विद्या तथा न यत्नपूर्वक परिश्रम के साथ की गयी राजसेवा, प्रत्युत पूर्वजन्म में किये गये तप के द्वारा अर्जित प्रारब्ध ही वृक्ष के समान समय पर निश्चित फल देता है। वस्तुतः मनुष्य का भाग्य ही समयानुसार अवश्य फल देता है और इसके पूर्वकृत ही काम में आते हैं। पूर्वजन्मों में किये गये पुण्य ही मनुष्य को बड़े भयङ्कर जंगल में, रणाङ्गण में, शत्रु, जल एवं अग्नि के बीच, महासमुद्र में, पर्वत की चोटी पर, सुप्तावस्था में, असावधानी की हालत में और विपत्तिग्रस्त होने पर रक्षा करते हैं। अगर मनुष्यों का कोई सहायक है तो वह उसका पहले जन्म में संचित शुभ कर्म ही है। पूर्वजन्म में संचित कर्म ही भाग्य के रूप में फल देता है। भतृहरि ने स्पष्टतया कहा है– वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये महार्णवे पर्वतमस्तके वा। सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा रक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि।। सब का कारण प्रारब्ध ही है। मनुष्य जो पूर्व जन्म में किया है उसका कारण वह स्वयं ही है, जिसको हम भाग्य, विधाता या दैव आदि के रूप में समझते हैं। अतः भाग्य बड़ा ही बलवान् है। भाग्य को बदलने की शक्ति किसी के पास नहीं हो सकती, अर्थात् वह होकर ही रहेगा। भतृहरि ने पुनः नीतिशतक में भाग्य को विशेष महत्त्व देते हुए कहा है

पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किम् ?
नोलूकोप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम् ?
धारानैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणम् ?
यत्पूर्वं विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः ?

अर्थात् यदि बसन्त ऋतु में करीर वृक्ष पर पत्ता नहीं लगता तो इसमें बसन्त का क्या दोष है ? यदि सूर्य के निकलने पर भी उल्लू को दिन में दिखाई नहीं देता, तो उसमें सूर्य का अपराध नहीं, यदि बादलों के बरसने पर भी चातक के मुख में जल नहीं गिरता तो बादलों की गलती नहीं, अपितु यह सब उन–उन के भाग्य के कारण ही ऐसा होता है, क्योंकि विधि ने जो विधान कर दिया, उसको बदलने की शक्ति किस में है, अर्थात् किसी में नहीं। अतः होनी हर स्थिति में होकर ही रहती है और तब हाथ पैर मारने पर भी कुछ नहीं बनता। ना भाव्यं भवतीह कर्मवशतो भाव्यस्य नाशः कुतः ? भाग्य को प्रधानता देना उचित है। भाग्य जिसका प्रबल है उसका विद्या और पौरुषता अर्थहीन है। वह भाग्य के आधार पर सब कुछ प्राप्त कर लेता है। जैसे कहा गया है–

"भाग्यं फलति सर्वत्र न विधा न च पौरूषम ।
शुराग कृत विद्याश्चः,वने तिष्ठंति मे सुताः।"

पांडवों की माता कुन्ती श्रीकृष्ण से कहती है कि मेरा पुत्र महापराक्रमी एवं विद्वान है किन्तु हम लोग फिर भी वनों में भटकते हुए जीवन गुजार रहे हैं,क्यों कि भाग्य सर्वत्र फल देता है । भाग्यहीन व्यक्ति की विद्या और उसका पुरुषार्थ निरर्थक है। वैसे देखा जाए तो भाग्य एवं पुरुषार्थ दोनों का ही अपना–अपना महत्व है, लेकिन इतिहास पर दृष्टि डाली जाए तो सामने आएगा कि जीवन में पुरुषार्थ की भूमिका भाग्य से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। भाग्य की कुंजी सदैव हमारे कर्म के हाथ में होती है, अर्थात कर्म करेंगे तो ही भाग्योदय होगा।

जब कि पुरूषार्थ इस विषय में पूर्णतः स्वतंत्र है। माना कि पुरूषार्थ सर्वोपरी है किन्तु इतना कहने मात्र से भाग्य की महता तो कम नहीं हो जाती। मनुष्य द्वारा किए गए कर्मों से ही उसके भाग्य का निर्माण होता है । लेकिन कौन सा कर्म, कैसा कर्म और किस दिशा में कर्म करने से मनुष्य अपने भाग्य का सही निर्माण कर सकता है–ये जानने का जो माध्यम है, उसी का नाम ज्योतिष एवं हस्तरेखा है।

संसार में कुछ लोग पुरुषार्थ को ही विशेष महत्त्व देते है उनके लिए भाग्य से भी अधिक महत्त्वपूर्ण पुरुषार्थ है। वे कहते हैं अगर भाग्य से आपको कुछ भी नहीं मिलता तो आप पुरुषार्थ के द्वारा उसको अवश्य प्राप्त कर सकते हैं। अतः अनेक विचारकों के अनुसार परिश्रम पर भरोसा करने वाले उद्यमियों को ही धन–सम्पत्ति, सफलता प्राप्त होती है। भाग्य ही सब कुछ है वह तो कामचोरों का ही कथन है। अतः भाग्य की परवाह किए बिना ही अपने सामर्थ्य के अनुसार पूर्ण पुरुषार्थ करना चाहिए। यदि तब भी कार्य नहीं बनता, तो इसका अर्थ है कि करने में कहीं कमी रह गई है अथवा वहां दैव को बली समझना चाहिए। इससे पहले हार नहीं माननी चाहिए, क्योंकि ऐसा करने पर ही वहां उसकी प्रबलता का ज्ञान हो सकता है। अतः हितोपदेश में कहा गया है–

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः दैवं हि देयनिति का पुरुषा वदन्ति।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्या, यत्नेकृते यदि न सिद्धति कोत्र दोषः।।

अथर्ववेद ने स्पष्टतया पुरुषार्थ के ऊपर बल दिया है। पुरुषार्थ या परिश्रम के द्वारा मनुष्य सुफल और विजय प्राप्त कर सकता है। अतः ऋषि ने कहा है– कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः।गोजिद् भूयासमश्वजिद् धनंजयो हिरण्यजित्।। अर्थात् मेरे दाहिने हाथ में कर्म है और वायें हाथ में विजय है। इन दोनों हाथों से हम गौ, अश्व, धन, भूमि एवं स्वर्ण आदि प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं। मैं अपनी इन्द्रियों को जीत कर राष्ट्र का जीतने वाला, धन और स्वर्ण का जीतने वाला बनूँगा। इसी महत् भावना को निम्न मन्त्र द्वारा आगे ब बढ़ाया गया है– अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः। अयं मे विश्वभेषजोयं शिवाभिममर्शनः।। यह मेरा हाथ सौभाग्य युक्त है। अति सौभाग्यशाली यह हाथ सबके लिए सभी रोगों का निवारणकर्त्ता है। यह हाथ शुभ और कल्याणकारी है।

गोपथ ब्राह्मण के अनुसार–आस्ते भग आसीनस्य ऊर्ध्वोतिष्ठति तिष्ठतः। शेते निपद्यमानस्य चराति चरतो भगः चरैवेति।। अर्थात् जो (मनुष्य) बैठ जाते हैं उसका भाग्य भी बैठ जाता है। जो खड़े हो जाते हैं उनका भाग्य भी खड़ा हो जाता है। जो सो जाते हैं उनका भाग्य भी सो जाता है। अतः जो चलता है, परिश्रम करता है उनका भाग्य भी चलने लगता है, अर्थात् समय पर समुचित फल देता है। इसलिए हमेशा पुरुषार्थ के द्वारा भाग्य को सजाग रखना चाहिए। जो लोग भाग्य को या प्रारब्ध को अधिक महत्त्व देते हैं वे भी पुरुषार्थ को स्वीकार करते हैं। क्योंकि प्रारब्ध का वास्तविक अर्थ है पुरुषार्थ। हम श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा जो कुछ फल अर्जित करते हैं उनमें से कुछ का हम उसी समय उपभोग कर लेते हैं और कुछ फल शेष बच जाते हैं, वह हमें कालान्तर में प्राप्त हो जाते हैं, उनके लिए हमें अलग से श्रम करने की आवश्यकता नहीं रहती है। उन्हें ही हम प्रारब्ध मानते हैं। वास्तव में प्रारब्ध पुरुषार्थ की सन्तान ही है। अतः इस जन्म में भी पुरुषार्थ के द्वारा आने वाले जन्म को हम फलप्रद तथा श्रेष्ठ बना सकते हैं। सबके मूल में पुरुषार्थ ही है। पुरुषार्थ से ही भाग्य बनता है और भाग्य साथ दें तो सुफल, यश आदि प्राप्त हो जाता है अन्यथा नहीं। संसार के व्यवहार से तो यह सिद्ध होता है कि जो अपने पुरुषार्थ द्वारा भाग्य से टक्कर लेने में समर्थ हैं, वही व्यक्ति दैव की मार से कभी भी दुःखी नहीं होता। दैव पुरुषकारेण यः समर्थः प्रवाधितुम्। न दैवेन विपन्नार्थं पुरुष सोवसौदति।। क्योंकि बलवान् प्रयत्न भाग्य को भी बदल देता है। अतः प्रसिद्ध आयुर्वेद ग्रन्थ अष्टांगहृदय में कहा गया है– बली पुरुषाकारो हि दैवमप्यतिवर्तते। आधुनिक युग में हम चारों ओर देखते हैं कि आज के सारे आविष्कार और हर क्षेत्र की सफलतायें एवं उपलब्धियां पुरुषार्थ का ही परिणाम है, अर्थात् यह सब मेहनत (या परिश्रम) की माया है। बिना पुरुषार्थ के प्राप्य सफलता केवल शब्दकोष में ही उपलब्ध होती है। अतः किसी विदेशी विद्वान् ने ठीक ही कहा है– The Dictionary is the only place where success comes before work. But in reality success comes after work or hard work.

निष्कर्ष

रूप में हम यह कह सकते हैं कि पुरुषार्थ से ही भाग्य बनता है और भाग्य से पुरुषार्थ ही श्रेष्ठ है। जिस को करने से मानव परम पुरुषार्थ को भी प्राप्त कर सकता है (अर्थात्) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष यह पुरुषार्थ चतुष्टय, पुरुषार्थ या परिश्रम या प्रबल उद्यम में ही प्राप्त हो सकता है, इसमें लेश मात्र संदेह नहीं है। अतः ठीक ही कहा गया है–उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः। न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगा।।

सन्दर्भ :

1ण अमरकोश, 4.28
2ण वेणी संहार, 3/37
3ण हितोपदेश, प्रस्तावना,
4ण याज्ञवल्क्य स्मृति,
5ण 5. अमरकोश, 4.28
6ण वेणी संहार, 3/37

7ण नीतिशतक,
8ण ऐतरेयब्राह्मण, 33.3
9ण वाल्मीकि रामायण, अयोध्याकाण्ड,
10ण अष्टांगहृदय, अ. द
11ण भगवद् गीता,
12ण 2. ऋग्वेद, 4/7